**ओ३म्**

**‘महान आर्य संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

वैदिक धर्म एवं संस्कृति के उन्नयन में स्वामी श्रद्धानन्द जी का महान योगदान है। उन्होंने अपना सारा जीवन इस कार्य के लिए समर्पित किया। वैदिक धर्म के सभी सिद्धान्तों को उन्होंने अपने जीवन में धारण किया था। देश भक्ति से सराबोर वह विश्व की प्रथम धर्म-संस्कृति के मूल आधार ईश्वरीय ज्ञान **‘‘वेद”** के अद्वितीय प्रचारकों में से एक थे। शिक्षा जगत, राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन, समाज व जाति सुधार, बिछुड़े हुए धर्म बन्धुओं की शुद्धि, दलितों के प्रति दया से भरा हृदय रखने वाले तथा उनकी रक्षा में तत्पर, आर्यसमाज के महान नेताओं में से एक, आदर्श सद्गृहस्थी, कर्तव्य पालन में अपना सर्वस्व व प्राण समर्पित वाले अद्वितीय महापुरुष थे। उनका व्यक्तित्व ऐसा है कि जिसे जानकर प्रत्येक सात्विक हृदय वाला व्यक्ति उनका अनुयायी बन जाता है। महर्षि दयानन्द के बाद आर्यसमाज और देश में उनके समान गुणों वाला व्यक्ति उत्पन्न नहीं हुआ। प्रसिद्ध आर्य वैदिक संन्यासी स्वामी डा. सत्य प्रकाश सरस्वती ने उनसे सम्बन्धित अपने कुछ संस्मरणों को प्रस्तुत करने के साथ उनके कार्यों पर अपनी राय भी दी है। इसी पर आधारित हमारा यह लेख है।

सन् 1916 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अवसर पर लखनऊ में स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती ने महात्मा मुंशीराम के दर्शन किए थे। 1914-15 में महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत आये थे और जनता में गांधी जी की लोकप्रियता बढ़ रही थी। नरम दल के नेता कांग्रेस से अलग हो गए थे और उन्होंने अपनी आल इण्डिया लिबरल फैडरेशन संघटित करना आरम्भ कर दिया था। गरम दल के व्यक्तियों के हृदय सम्राट् लोकमान्य तिलक जी थे। 8 अप्रैल, 1915 को गुरुकुल कांगड़ी में महात्मा मुंशीराम के आश्रम में मिस्टर गांधी आये और **‘‘महात्मा”** गांधी बन करके वहां से निकले। महात्मा मुंशीराम जी ने ही गांधी जी को गुरुकुल में पधारने पर पहली बार उनको महात्मा शब्द से सम्बोधित किया था, यह महात्मा शब्द इसके बाद आजीवन उनके नाम के साथ जुड़ा रहा। यही गांधी जी के महात्मा गांधी बनने का इतिहास है। सन् 1916 की कांग्रेस में स्वामी सत्यप्रकाश जी ने गांधी जी और मंुशीराम जी दोनों को राष्ट्रभाषा हिन्दी सम्बन्धी एक समारोह में देखा था। दोनों की वेशभूषा की रूपरेखा बराबर उनकी आंखों के समाने बनी रही, ऐसा उन्होंने अपने लेख में वर्णित किया है। तब वहां महात्मा मुंशीराम जी भव्य दाढ़ी, सुदृढ़ शरीर और गले के नीचे पीत वस्त्र तथा गांधी जी अपनी काठियावाड़ी पगड़ी, अंगरखा और नंगे पैर उपस्थित थे। इसके बाद स्वामी सत्यप्रकाश जी प्रयाग आ गये। वहां **‘आर्यकुमार सभा’** के उत्सव पर स्वामी श्रद्धानन्द जी आये थे और तब स्वामी सत्यप्रकाश जी ने उन्हें निकट से देखा। स्वामी श्रद्धानन्द जी को प्रयाग में नयी सड़क के एक दुमंजिले मकान में ठहराया गया था।

स्वामी सत्यप्रकाश जी ने यह भी वर्णन किया है कि 26 दिसम्बर 1919 को अमृतसर कांग्रेस में स्वामी श्रद्धानन्द स्वागताध्यक्ष थे और पं. मोतीलाल नेहरू अध्यक्ष। किम्वदन्ती है कि दोनों ने एक-दूसरे को पहचाना--दोनों सहपाठी थे बनारस, इलाहाबाद, आगरा या बरेली में से किसी स्थान पर। महात्मा मुंशीराम जी की प्रारम्भिक शिक्षा बरेली में हुई, 1873 में उच्च शिक्षा क्वीन्स कालेज बनारस में, 1880 और पुनः 1888 में कानूनी शिक्षा लाहौर में। महात्मा मुंशीराम जी का नाम श्रद्धानन्द संन्यास के बाद पड़ा। संन्यास उन्होंने 12 अप्रैल 1917 को मायापुर (कनखल) में लिया था। स्वामी सत्यप्रकाश जी सन् 1915-16 में इन्द्र विद्वद्यावाचस्पति और पौराणिकों की बातें सुना करते थे, क्योंकि 1912-16 तक सनातन धर्म सभाओं की बड़ी धूम थी--ये सनातन धर्म सभाएं धीरे-धीरे निष्क्रिय हो गयीं।

स्वामी सत्यप्रकाश जी ने अपने संस्मरणों में बताया है कि सन् 1925 ई. में मथुरा में जो महर्षि दयानन्द जन्म शताब्दी मनायी गयी थी उसके अध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्द थे--तब तक उनका स्वास्थ्य गिर चुका था और महात्मा नारायण स्वामी जी वस्तुतः उस समारोह के कार्यकर्त्ता अध्यक्ष थे। आनन्द भवन में होने वाली कांगे्रस की बैठकों में 1922 ई. के बाद भी स्वामी जी इलाहाबाद कतिपय बार आये। 1921 ई. के अप्रैल मास में पं. मोतीलाल जी की पुत्री विजयलक्ष्मी के विवाह में भी स्वामी श्रद्धानन्द जी सम्मिलित हुए थे पर **मोपला काण्ड (मालाबार, केरल)** के बाद श्रद्धानन्द जी कांग्रेस से धीरे-धीरे अलग हो गये। स्वामी दयानन्द ने मृत्यु के समय आर्यसमाज का नेतृत्व किसी व्यक्ति के हाथ में नहीं छोड़ा था। ईश्वर के भरोसे मानों वे चल दिये। 1883 ई. के बाद स्वयं ही आर्यसमाज में **‘व्यक्तियों’** का प्रादुर्भाव हुआ। इन व्यक्तियों में श्रद्धानन्द का इतिहास ही आर्यसमाज का इतिहास है। इस युग के अन्य लोगों में महात्मा हंसराज, पं. गुरुदत्त, पं. लेखराम, लाला लाजपतराय, स्वामी दर्शनानन्द और स्वामी नित्यानन्द का भी अभूतपूर्व व्यक्तित्व था।

स्वामी सत्यप्रकाश जी के अनुसार स्वामी श्रद्धानन्द ने इस शती के प्रथम पाद में भारत के इतिहास में मार्मिक भूमिका निभायी। आर्यसमाज में दयानन्द के बाद श्रद्धानन्द-सा दूसरा व्यक्ति देखने में नहीं आया। स्वामी सत्यप्रकाश जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी की 1924 ई. में प्रकाशित **‘कल्याण-मार्ग का पथिक’** आत्मकथा को पढ़ा, उनके पास उनका और गुरुकुल कांगड़ी में श्रद्धानन्द जी सहयोगी आचार्य रामदेव जी द्वारा सम्पादित **‘द आर्यसमाज एण्ड इट्स डिटैक्टर्स-ए विण्डिकेशन’** प्रसिद्ध ग्रन्थ था। **‘दुःखी दिल की पुरदर्द दास्तान’** उन्होंने नहीं पढ़ी। ( उर्दू में लिखित यह ग्रन्थ आर्यसमाज के आन्तरिक विग्रह की कष्ट कथा है। इसका अनुवाद हरिद्वार निवासी हिन्दी कवि श्री सुमन्त सिंह आर्य ने किया है जो प्रकाशन की प्रतीक्षा में है। कुछ विद्वान इसमें समाहित आलोचनाओं के कारण इसके प्रकाशन की आवश्यकता नहीं समझते। हमारी अनुवादक महोदय से भेंट हुई है। उन्होंने बताया कि यह ग्रन्थ उन्होंने प्रकाशनार्थ आर्यविद्वान डा. महावीर अग्रवाल जी को दिया हुआ है।)। श्रद्धानन्द जी विषयक सबसे अधिक बातें स्वामी सत्यप्रकाश जी को स्वामी श्रद्धानन्द जी पर आस्ट्रेलियाई प्रो. जे.टी.एफ. जार्डन्स की पुस्तक से ज्ञात हुईं।

स्वामी सत्यप्रकाश जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी पर कई टिप्पणियां की हैं। वह लिखते हैं कि गुरुकुल के अनगिनत स्नातकों के कुलगुरु महात्मा मुंशीराम थे, न कि श्रद्धानन्द। मुंशीराम और श्रद्धानन्द तो दो अलग व्यक्तित्व हैं। मुंशीराम के रूप में वे महात्मा थे, गांधी के अत्यन्त निकट, गुरुकुलीय प्रणाली के उन्नायक, शिक्षा के क्षेत्र में अनन्य प्रयोगी तथा टैगोर की समकक्षता के शिक्षाशास्त्री। दूसरा उनका स्वरूप स्वामी श्रद्धानन्द का रहा--सम्प्रदायवादिता मिश्रित राष्ट्र-उलझनों में फंसे हुए--कभी मालवीय के साथ, कभी महासभा के साथ, कभी उनसे दूर भागते हुए अत्यन्त विवादास्पद व्यक्तित्व, कभी-कभी निर्वाचनों की उलझनों में फंस जाने वाले व्यक्ति। उसका उन्हें पुरस्कार मिला--23 दिसम्बर, 1926 ई. को सायंकाल 4 बजे दिल्ली में अब्दुल रशीद की गोलियों से बलिदान । वे सदा के लिए अमर हो गए। अंग्रेजों की संगीनों के सामने छाती खोलकर खड़ा होने वाला वीर राष्ट्रभक्त संन्यासी श्रद्धानन्द का एक यह तेजस्वी रूप था। (महर्षि दयानन्द के बाद वैदिक धर्म के 7 मार्च, 1897 को एक विधर्मी आततायी द्वारा प्रथम शहीद पण्डित) लेखराम की पंक्ति में खड़ा कर देने वाला ऋषि दयानन्द का असीम भक्त अमर शहीद श्रद्धानन्द।

स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना की और उसे अपने खून से सींचा। आज यह संस्था अपने मूल उद्देश्य व गौरवपूर्ण अतीत से दूर हो चुकी है। यह स्थिति हमें कई बार पीड़ा देती है। 23 दिसम्बर को स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस है। अतः इस अवसर पर उनके पावन जीवन चरित्र का अध्ययन कर अपने जीवन को सुधारा व पुण्यकारी बनाया जा सकता है। धर्म की वेदी पर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी का जीवन चरित्र व उनके ग्रन्थों का अध्ययन कर ही उनको श्रद्धांजलि दी जा सकती है। स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रायः सभी ग्रन्थों को **‘श्रद्धानन्द ग्रन्थावली’** के नाम से लगभग 27 वर्ष पूर्व 11 खण्डों में प्रकाशित किया गया था। इसका नया भव्य एवं आकर्षक संस्करण दो खण्डों में **‘विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, 4408 नई सड़क, दिल्ली’** से इसी माह प्रकाशित किया गया है। हम पाठकों को इसे मंगाकर पढ़ने की संस्तुति करते हैं। आईये, स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन व कार्यों को जानकर उनसे प्रेरणा ग्रहण करें और वैदिक धर्म व संस्कृति की सेवा कर अपने जीवन को कृतार्थ एवं सफल करें।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**